मानकी की पीड़ा

ऋता शुक्ल

मानकी की पीड़ा

उस दिन मानकी ने साफ-सुथरे कपड़े पहने थे, उलझे हुए रूखे बालों का एक ऊँचा बेतरतीब जूड़ा बनाया था और मेरी बिटिया ने उसके जूड़े में अपने गमले का इकलौता गेंदा खोंस दिया था फिर वह मरे पास आकर जिद करने लगी थी, 'माँ-माँ, अपनी आलमारी से आलता निकालकर दो न, मानकी अपने पैर रँगेगी।'

'आज बात क्या है? मानकी का इतना साज-सिंगार किसलिए? पास बैठी अम्मा ने शिप्रा को खींचकर अपनी गोंद में बिठा लिया था।

‘उँहू नानाजी, छोड़िए न, मानकी ने आज हमको एक बहुत अच्छी बात बताई है, हम आपको नहीं बताएँगे। हम लो माँ को भी नहीं बताएँगे।’

आलता के लिए शिप्रा का ठुनकता बदस्तूर जारी था और अम्मा उसे खिझाए जा रही थी, ‘मानकी के पास सटकर मत बैठना री नातिनी, वह तेरे माथे में जूँ डाल देगी। फिर तू स्कूल में बैठी-बैठी सिर खुजलाएगी न तो मास्टरनी खूब मारेगी और मानकी–फानकी तुझे बचाने नहीं जाएगी।’

‘नानी को तो मानकी से हमेशा गुस्सा रहता है माँ, तुम आलता दो न। हम नानी से बात नहीं करेंगे।

मुझे आलमारी की ओर बढ़ते देखकर शिप्रा ने अम्मा की गोद से अपने आप को जबरदस्ती छुड़ा लिया था और मेरे हाथ से आलता की शीशी लेकर दौड़ती हुई बाहर ओसारे में चली गई थी।

जन्म की अधपगली मानकी की माँ मेरे घर में चौका-बासन करती थी। सात बरस की अमर में जब मानकी की लटपटाती आवज फूटी थी, तभी से उसके भीतर असामान्यता के लक्षण उभरने लगे थे।

मेरी अम्मा सुखिया काकी को अकसर टीका करती थी, ‘लड़की के रंग-ढंग अजीब हैं सुखिया ! जब देखो तब, अपने आप कुछ-न-कुछ बुदबुदाती और हँसती रहती है। तू इसका कुछ जतन कर।’

डॉक्टर को दिखाने की बात पर सुखिया एक ही राग अलापती थी -

‘मरद सराबी, जुआड़ी बा भउजी, दू-दू गो लइकन के पेट पालन मुश्किल बा। एक लँगड़ी के इलाज के झोंके खातिर पइसा कहाँ से आई? अइसने रहे द, जियों चाहे मरो, अब भगावाने एकर मालिक बाड़े। के सोच में हम त हजार बेर मरल बानी भउजी! अब तू एकर उधार करिह। गरीब के लाज तहरा हाथ में बा भउजी, कहल-सुनल माफ…।’

सुखिया काकी का तेरहवाँ भी नहीं बीता था कि मानकी का शराबी बाप नई-नवेली बहू घर ले आया था। उसके दोनों भाई घर से भागकर स्टेशन पर रहने लगे थे और मानकी पीठ में धँसा पेट दिखाती हुई अम्मा के सामने सुबक-सुबककर रो पड़ी थी, ‘हमारी माई मार गई न, इसीलिए बाबू हमको गाली देता है और नयकी माई हमको

पगली कहती है। बताओ न चाची, हम पगली हैं का?हमारी माई ने तो कभी भी हमें...'

अम्मा ने मानकी को अपने घर में शरण दी थी और उसी दिन से वह हमारे परिवार का अविभाज्य अंग बन गई थी।

थोड़ी ही देर में शिप्रा ने मानकी को अम्मा के सामने ला खड़ा किया। मानकी का प्रसाधन सारी दुनिया से निराला बन पड़ा था। शिप्रा ने उसके बालों में अम्मा की काली चोटी फँसाकर उसकी चुटिया को कमर तक लटकती लंबी झबरीली चोटी की शक्ल दे डाली थी। चेहरे पर पाउडर के बड़े-बड़े धब्बे थे, आँखों में काजल की मोटी तह।

शिप्रा अम्मा से अपनी प्रसाधन क्षमता का लोहा मनवाने पर तुली बैठी थी। 'जैसा काजल कैलेंडर वाली हेमा मालिनी का है, वैसा ही हमने भी लगाया है न नानी?'

मानकी की लंबी बरौनियों पर चढ़े हुए काजल की मोटी तह ने आँखों के नीचे बरौनियों का चित्र सा उकेर दिया था। शिप्रा की अनाड़ी उँगलियों में लगे काजल के धब्बे मानकी की भाँहों के ऊपर, उसकी ठुट्ठी के नीचे और इधर-उधर कानों के पास तक पसरे हुए थे।

अम्मा की लाल पाढ़ वाली साड़ी पहनकर अपने आलता लगे होंठों को सयत्न छिपाती मानकी लाज से दुहरी हुई जा रही थी।

पास बैठी छोटी भाभी ने शिप्रा की सारी मेहनत को बेकार बताते हुए मानकी की तुलना बहुरूपिया से कर दी थी और शिप्रा ने छुट्टी वाले दिन का अपना सबसे प्रिय खेल वहीं तहस-नहस कर डाला था।

आपकी छोटी भाभी से कभी बात नहीं करने की सौगंध दुहराती मानकी का हाथ पकड़कर छत पर दौड़ गई थी -

'हम जा रहे हैं नानीजी से कह देने – मानकी कुछ नहीं।'

शिप्रा और मानकी की सारी फरियादों के लिए सबसे उपयुक्त जगह थी बाबूजी की अदालत।

उनके सिरहाने रखी रामकृष्ण परमहंस की वृहद् कांस्यमूर्ति को निर्णायक बनाया जाता है। फरियादी उसके सामने अपनी बातें कहते और अंत में होम्योपैथी की कुछ गोलियों या फिर चवन्नियों और अठन्नियों की उम्मीद देकर मामला शांत कर दिया जाता।

बाबूजी ने अम्मा को हिदायत दे रखी थी - 'मानकी को कभी डाँटा नहीं जाए।'

एक बार उसके हाथ से चीनी मिट्टी की चार बड़ी प्लेटें एक साथ छूटकर नीचे गिर गई थीं। बड़ी भाभी ने गुस्से में उसे एक चपत लगा दी थी और वहीं चौके में बैठकर मानकी नि:शब्द रूदन करती रही थी। अपनी टेढ़ी-मेढ़ी उँगलियों से प्लेट के टूटे टुकड़े समेटती मानकी का निरीह चेहरा सहसा बाबूजी के सामने पड़ गया था। दालान की ओर जाते उनके पाँव ठिठक गए थे-क्या हुआ मानी, क्यों रो रही है? बाबूजी का दुलार भरा संबोधन पाकर मानकी जोर-जोर से हिचकियाँ लेने लगी थी - 'हम पा..ग... ल... हैं चाचा? बड़की भउजी ने... '

बाबूजी उसे पुचकारते हुए आगे बढ़ गए थे। शिप्रा ने ही बताया था -

'नाना मानकी के बारे में कह रहे थे कि उसे डाँटा जाए तो वह बहुत बुरा मानती है, उसका दिमाग सही नहीं है।'

'मानकी का दिमाग सही क्यों नहीं है माँ, वह ठीक से बात क्यों नहीं करती? जब देखो तब उलटा-पुलटा बोलती रहती है। उसके लिए डॉक्टर बुलाओ न माँ, वह कभी अच्छी नहीं होगी क्या?'

नन्ही शिप्रा उर्फ मानकी की सिपिया दीदी को मैं कैसे समझाती-सुखिया काकी ने मानकी का जीवन अपने हाथों नष्ट किया था। रो-रोकर उसने अम्मा के आगे कबूला था - 'तू हमार अनपूरना हउ भउजी, हम साँच बात कहब। मानकी के जनम ना होवे, एह खातिर हम खैराती अस्पताल के नरस पासे... उ का जाने कवन गोली देले रहे। जनमते एह अभागिन के हाथ-गोड़ मउराइल ककड़ी अइसन टेढ़ बुझाइल रहे। हम का जानत रहीं कि दिमागो।'

बाबूजी की होम्योपैथी दवाओं का कोई भी असर मानकी पर नहीं हुआ था। पड़ोस के रामाश्रय पंडित ने बाबूजी को सलाह दी थी, 'इस पगली को घर में रखकर आप एक दिन मुसीबत में पड़ सकते हैं। बेहतर हो कि इसके बाप को बुलाइए और इसे उसके साथ कीजिए।'

बाबूजी के संक्षिप्त उत्तर ने रामाश्रय पंडित की बोलती बंद कर दी थी, 'अगर आपकी कोई बेटी ऐसी अपंग हो जाती तो आप क्या करते पंडित, गला घोंट देते कि घूर पर फेंक देते?'

'मानकी को चार रोटी और तन ढकने का कपड़ा देकर मैंने कोई विशेष एहसान नहीं किया है। सुखिया ने बीस बरस मेरे घर रहकर चौका-बासन में गुजार दिए, मेरे बच्चों की गंदगी साफ की। फिर मानकी का बोझ उठाने की आदमियत तो मुझ में होनी ही चाहिए।'

हर लंबे अवकाश में घर जाने का मेरा नियम सा बन गया था। शिप्रा तो दिन गिनती रहती-गरमियों की छुट्टियों में कितने दिन बाकी हैं माँ, हम नानी के यहाँ कब चलेंगे? इस बार दुर्गापूजा कितनी तारीख को पड़ेगी?

रिक्शे से उतरते ही शिप्रा दौड़ती हुई बरामदे में खड़ी मानकी के पास पहुँच जाती, उसकी टेढ़ी-मेढ़ी उँगलियों को छूकर अपना लाड़ जताती हुई वह चहकने लगती-मानो देखो, हम तुम्हारे लिए कितनी दूर से आए हैं।... आओ न मानो, हम तुम्हारे साथ खेलेंगे।

एक बार शिप्रा का लंबी बीमारी के कारण घर जाना नहीं हो सकता था। उसके बाद तो व्यवधानों की एक श्रृंखला ही खिंचती चली गई थी। घर से खबर आती - 'अम्मा शिप्रा को देखने के लिए व्याकुल हैं।' बाबूजी की लाड़ भरों चिट्ठी आती-'शिप्रा बेटे, तुम्हारे बिना हमें कुछ भी अच्छा नहीं लगता। मुझे प्यार से खिलाने-पिलाने वाला कोई नहीं रह गया हैं। तुम जल्दी आओ।'

दो वर्षों के बाद ही घर जाना हो सका था और उसी समय वह दुर्घटना घटी थी। नवरात्र के पहले दिन ही मानकी अचानक हमारे घर से चली गई थी। सुबह नाश्ते के समय शिप्रा उसे पूरे घर में छान आई थी। अम्मा ने घबड़ाते हुए बाबूजी को खबर दी थी और वे बौखलाहट में अपना पाठ अधूरा ही छोड़कर नीचे उतर आए थे।

'मानी... मानी...!

मानकी ई... ई... ई... !'

अम्मा, बाबूजी, शिप्रा और घर के सारे लोग मानी की तलाश में इधर-उधर भाग-दौड़ करने लगे थे। घर के सामने और पिछवाड़े के अहाते में, पास-पड़ोस में... मानकी

कहीं नहीं थी।कुम्हार टोले में उसके बाप के पास पूछताछ की गई, वह वहाँ भी नहीं पहुँची थी।

दस दिनों के बाद मानकी की अचानक वापसी हुई थी। रात के हलके धुँधलके में पूरा घर मानकी के इर्द-गिर्द जुट आया था - हैंडलूम की सस्ती लाल रंगवाली पाढ़दार साड़ी, गले में काँच के काले मोतियों की माला, माँग में सिंदूर और हाथों में जस्ते की चार-चार चूड़ियाँ।

अम्मा को देखकर मानकी जोर-जोर से हँसने लगी थी। उसकी हँसी में पहले की सी ही असामान्यता थी, लेकिन उसका व्यवहार बिलकुल बदला हुआ लग रहा था।

'यह सब क्या है मानकी? तुम कहाँ थी?' मानकी ने जरा सा लजाकर अपनी माँग की ओर इशारा किया था, और फिर वैसी ही हँसी-हँस पड़ी थी। अम्मा ने उसे फिर कुरेदा था, 'वह कौन है मानकी? तू कैसे?

बहुत देर तक मगजपच्ची करने के बाद मानकी के असंबद्ध वाक्यों और टूटे-फूटे शब्दों को जोड़कर एक कहानी उभर पाई थी, 'हमारे घर के सामने से भीख माँगता, ऊटपटाँग गाने गाता हुआ एक नीमपागल लड़का गुजरा करता था। कमर में चिथड़ा लपेटे रहने वाले उस अधनंगे पागल को मानकी अकसर घूरती रहती थी। भाभी ने एक बार उससे मजाक भी किया था - 'क्यों री मानको, पगले से ब्याह करेगी क्या? तेरा लगन तो बौड़मदास से ही होना चाहिए न !'

मानकी ने बड़े हुलास से बताया था, 'नहर के आखिरी छोर पर पाकड़ की डाल से अपनी पुरानी साड़ी के दोनों सिरे उलझाकर उसने दिवारें घेर ली थीं, वहीं वे दोनों... '

'और यह साड़ी...?'

उसने इशारे से समझाया था - 'जमीन के नीचे माटी की कुल्हिया में उसके मरद ने अपनी भीख का धन बटोरा था, उसी से... '

अम्मा के कहने पर मानकी एक दिन अपने बौड़मदास के साथ आई थी। भाभी की चुहल पर बौड़मदास लजा गया था और रोटी खाकर दोनों एक-दूसरे का हाथ पकड़ हमारे ओसारे से नीचे उतर गए थे।

'अम्मा ने एक ठंडी साँस भरी थी - भगवान् की लीला भी कैसी विचित्र है। एक-दूसरे को सँभालकर दोनों अपनी जिंदगी का निबाह कर लें, यही बहुत होगा।'

दो-ढाई महीने बीतते-न-बीतते मानकी के बावरे मरद की मति एक दिन सहसा बदल गई थी। नुचा हुआ चेहरा और उजड़ा श्रृंगार लिए मानकी फफककर रोती हुई अम्मा की गोद में गिर पड़ी थी-‘क्या हुआ मानी, क्या बात हो गई री?’

मानकी ने अपने गले पर पड़े उँगलियों के जबरदस्त निशान दिखाए, दाँत से काटकर उभारे गए माँस के लोथड़ो से भरी पीठ दिखाई।

‘ऐसा क्यों हुआ? तू कुछ बता तो मानकी?’

अम्मा ने उसके आँसू पोंछकर उसे सहज करने की कोशिश की थी। हाथ-मुँह धुलाने के लिए उठाने पर उनकी नजर मानकी के हलके उभरे पेट पर पड़ी थी -

‘मानकी, तेरी तबीयत… क्या तू…? ’

मानकी ने अपने पागल पति के प्रस्ताव का विरोध किया था। उसकी दुर्दम्य कामवासना मानकी को शारीरिक दंड देकर ही शांत हो पाई थी। मानकी की अनिच्छा के एवज में उसने…

अम्मा गहरे सोच में पड़ गई थीं, लुंज-पुंज हाथों वाली मानकी, अपनी जलन तो ठीक से कर ही नहीं पाती, ऊपर से एक नई मुसीबत उठा लाई है, इसका उद्धार कैसे होगा?

मानकी को लेकर घर में आए दिन विवाद होता रहता-भइया भाभी उसे ऐसी हालत में अपने यहाँ ठहराने की बात को लेकर क्षुब्ध थे। किससे उसकी देखभाल हो सकेगी?’

‘आगे का भी तो सोचना है।’

‘बच्चे को पालने का भार भी हमारे हो ऊपर…।’

‘इस महँगाई में…’

पास-पड़ोस के कई लोगों ने मानकी को अनाथालय भेज देने की सलाह दी थी। मानकी ने अम्मा के सामने दीवार पर अपना सिर पटक-पटककर विरोध जाहिर किया था, ‘वह कहीं कहीं जाएगी, वह यहीं रहेगी।’

हर घड़ी अकारण हँसती रहने वाली मानकी के चेहरे पर कुछ महीनों में अजीब सी मुर्दनी छा गई थी। रसोईघर से सटे ओसारे में अज्ञात लकीरें खींचती रहती। शिप्रा

उसे हँसाने की कोशिश करती, लेकिन वह टुकुर-टुकुर उसकी ओर देखती बैठी ही रह जाती। अम्मा ने उसे अपने पेट पर हाथ फेरकर धीरे-धीरे कुछ बोलते हुए भी पाया था।

प्रसव के ठीक दो दिन पहले...

काफी रात बीत जाने पर उसकी कोठरी से बड़ी मीठी सी हँसी की आवाज सुनकर अम्मा लगभग दौड़ती हुई उसके पास पहुँची थीं। उन्हें देखते ही मानकी दोनों हथेलियों से अपना चेहरा छिपाने की भरपूर कोशिश करती हुई दोहरी हो गई थी। अम्मा की आँखें सहसा चटाई पर औंधी छोटी सी प्लास्टिक की गुड़िया पर जा पड़ी थी। शिप्रा के खेल की साथिन फूले-फूले गालों वाली उस गुड़िया को न जाने कब मानकी चुपके से अपनी कोठरी में उठा ले गई थी।

उसी रात भयंकर दर्द से लगभग बेहोश सी पड़ी मानकी को अस्पताल ले जाया गया था।

सत्रह साल की मानकी के अत्यंत दुर्बल शरीर को सामान्य प्रसव की दृष्टि से अक्षम करार देते हुए लेडी डॉक्टर ने तुरत ऑपरेशन का सुझाव दिया था। मानकी की अर्ध मृत कन्या ऑक्सीजन के सहारे कुल चार घंटे ही जिंदा रह पाई थी। मानकी ने उसका मुँह तक नहीं देखा था।

होश में आने पर चारों तरफ अपनी आँखें घुमाकर उसने न जाने किसे खोजना चाहा था। उसके सूखे होंठ रह-रहकर धीरे से थरथरा रहे थे, न जाने वह क्या पूछना चाहती थी?

पंद्रह दिनों के बाद अम्मा अस्पताल से उसका नाम कटवाकर घर लिवा लाई थीं। अस्पताल से वापस लौटी मानकी की अगवानी के लिए शिप्रा बाहर के ओसारे में ही खड़ी थी, 'मानी दीदी, तुम अच्छी हो गई न?' मानकी ने शिप्रा की बात बिलकुल अनसुनी कर दी थी। ... उसकी आँखें शिप्रा की दाहिनी बाँह से झूलती प्लास्टिक की गुड़िया पर ही अटकी थीं।

शिप्रा ललककर उसे छूने के लिए आगे बढ़ी ही थी कि मानकी उसके हाथों से हठात् गुड़िया छीनकर बेतहाशा दौड़ती हुई अपनी कोठरी में घुस गई थी। अम्मा के पाँव चौखट से आगे नहीं बढ़ सके थे। मानकी उस निर्जीव गुड़िया को अपने दोनों हाथों में लेकर फटी-फटी आँखों से एकटक घूरती जा रही थी।

थोड़ी देर बाद खिलौने को अपने गले से लगाकर उसे जल्दी-जल्दी पोंछती चुपचाप वहाँ से हट गई थी। मानकी की धारदार हँसी का करूण स्वर धीमी कराहटों में क्रमश: तब्दील होता गया था। वह थककर सो गई थी, लेकिन उसकी चीख सैकड़ों सवालों की शक्ल अख्तियार करती हमारे घर में इधर-उधर बदस्तूर भटक रही थी और हम सब खामोश थे।